विश्वकर्मविद्या प्रकाश



श्रीः

विश्वकर्मविद्याप्रकाशः

हिन्दीटीकया समेतः

रोहितकप्रदेशान्तर्गतबेरीग्रामनिवासिगौडवंशा-
वतंसविविधशास्त्रपरमपण्डितश्रीशिवसहाय-
पुत्र रविदत्तशास्त्रिराजवैद्य विरचितः—

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

संस्करण : मई २०१६, सवंत् २०७३

मूल्य : ३० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers
Khemraj Shrikrishnadass
Prop: Shri Venkateshwar Press
Khemraj Shrikrishnadass Marg,
7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.khe-shri.com
E-mail : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj for M/s Khemraj Shrikrishnadass
Prop. Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400004,
at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate.
Pune -411 013.

श्रीः ।

विषयानुक्रमणिका ।

विषयानुक्रमणिका ।

विषयाः	पृष्ठाङ्काः

इति विषयानुक्रमणिका समाप्ता ।

श्रीगणेशायनमः

विश्वकर्मविद्याप्रकाशः

हिन्दीटीकासमेतः

मंगलाचरणम्

श्रीमद्गुरून्नमस्कृत्य विशुद्धानन्दरूपिणः ।
विश्वकर्मप्रकाशोऽयं रविदत्तेन रच्यते ।।१।।

अर्थ–अब विश्वकर्मविद्याप्रकाश ग्रंथ को कहते हैं। अब ग्रंथकार निर्विघ्नतापूर्वक ग्रंथ की समाप्ति के लिये नमस्कारात्मक मंगल करता है–विशुद्ध आनंद रूपवाले श्रीयुत गुरुजी को प्रणाम कर इस विश्वकर्म (विद्या) प्रकाश ग्रंथ को रविदत्त रचता है।।१।।

गृहस्यावश्यकता

गृहस्थस्य क्रियाः सर्वा न सिध्यंति गृहं विना ।
यतस्तस्माद्गृहारंभसमयः प्रोच्यते बुधैः ।।२।।

जिस कारण से गृहस्थ की सब क्रिया घर के विना सिद्ध नही हो सकतीं उसी कारण से पंडित घर को बनाने का समय कहते हैं।।२।।

वृषवास्तुचक्रम्

गेहाद्यारंभेऽर्कभाद्वत्सशीर्षे रामैर्दाहो वेदभैरग्रपादे । शून्यं वेदैः पृष्ठपाठे स्थिरत्वं रामैः पृष्ठे श्रीर्युगे दक्षकुक्षौ ।।३।। लाभो रामैः पुच्छगैः स्वामिनाशो वेदैर्नैस्व्यं वामकुक्षौ मुखस्थैः।रामैः पीडा संततं वाऽर्कधिष्ण्यादभ्यै रुद्रैर्दिग्भिरक्तं ह्यसत्सत् ।।४।।

अब वृषवास्तुचक्र कहते हैं—घर आदि के आरंभ में जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे दिन के नक्षत्र तक गिने; प्रथम तीन नक्षत्र वृष के शिर पर होते हैं, उनमें आरंभ हो तो घर में अग्नि लगे। पीछे चार नक्षत्र वृष के अगले पैरों पर होते हैं, उनमें आरंभ हो तो घर शून्य रहे। पीछे चार नक्षत्र वृष के पिछले पैरों पर होते हैं, उनमें आरंभ हो तो घर बनानेवाले की स्थिरता रहती है। पीछे तीन नक्षत्र वृष के पीठ पर स्थित हैं, उनमें आरंभ हो तो लक्ष्मीजी की प्राप्ति होती है। पीछे चार नक्षत्र वृष की दाहिनी कुक्षि में स्थित हैं, उनमें आरंभ हो तो।।३।। लाभ होता है। पीछे तीन नक्षत्र वृष की पूंछ में स्थित हैं, उनमें आरंभ हो तो घर बनानेवाले का नाश होता है। पीछे चार नक्षत्र वृष के बाईं कुक्षि में होते हैं, उनमें आरंभ हो तो दरिद्रपना होता है। पीछे तीन नक्षत्र वृष के मुख में

स्थित हैं, उनमें आरंभ हो तो घर बनानेवाले को पीड़ा होती है। जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे सात अशुभ, ग्यारह शुभ, पीछे दश अशुभ ऐसे हैं॥४॥

संक्रांतिपरत्वेन गृहारम्भस्य शुभाशुभत्वम्

गृहसंस्थापनं सूर्य्ये मेषगे शुभदं भवेत्। वृषस्थे धनवृद्धिः स्यान्मिथुने मरणं ध्रुवम् ॥५॥ कर्कटे शुभदं प्रोक्तं सिंहे भृत्यविवर्द्धनम्। कन्या रोगं तुला सौख्यं वृश्चिके धनवर्द्धनम् ॥६॥ कार्मुके च महाहानिर्मकरे स्याद्धनागमः। कुंभे तु रत्नलाभः स्यान्मीने सद्म भयावहम् ॥७॥

मेष के सूर्य में घर बनाना शुभ देता है। वृष के सूर्य में घर बनाना धन को बढ़ाता है। मिथुन के सूर्य में घर बनाना मृत्यु को निश्चय करता है॥५॥ कर्क के सूर्य में घर बनाना शुभ देता है। सिंह के सूर्य में घर बनाना नौकरों को बढ़ाता है। कन्या के सूर्य में घर बनाना रोग को करता है। तुला के सूर्य में घर बनाना सुख करता है। वृश्चिक के सूर्य में घर बनाना धन को बढ़ाता है॥६॥ धन के सूर्य में घर बनाना बहुत हानि करता है। मकर के सूर्य में घर बनाना धन का आगमन करता है। कुंभ के सूर्य में घर बनाना रत्नों का लाभ करता है। मीन के सूर्य में घर बनाना भय को देता है॥७॥

गृहारंभस्य शुभकालः

भौमार्करिक्तामाद्यूने चरोनेऽङ्के विपंचके। व्यष्टांत्यस्थैः शुभैर्गेहारंभस्त्र्यायारिगैः खलैः ॥८॥

मंगलवार रविवार चतुर्थी नवमी चतुर्दशी अमावस प्रतिपदा अष्टमी इनसे रहित दिन हो, मेष कर्क तुला और मकर इनसे रहित लग्न हो, रोग अग्नि नृप चोर और मृत्यु इन बाणों से रहित दिन हो, शुभ ग्रह आठवें और बारहवें न हों और पाप ग्रह तीसरा ग्यारहवां और छठे स्थान में हों ऐसा लग्न होने में घर का आरंभ करना शुभ है॥८॥

देवालयाद्यारंभे संक्रांतिपरत्वेन राहुमुखविचारः

देवालये गेहविधौ जलाशये राहोर्मुखं शंभुदिशो विलोमतः। मीनार्कसिंहार्कमृगार्कतस्त्रिभे खाते मुखात्पृष्ठविदिक्छुभा भवेत् ॥९॥

देवता का मंदिर बनाने में मीन, मेष, वृष के सूर्य विषे राहु का मुख ईशान में होता है। मिथुन, कर्क, सिंह के सूर्य विषे राहु का मुख वायव्य में होता है। कन्या, तुला, वृश्चिक के सूर्य में राहु का मुख नैर्ऋत्य में होता है। धन, मकर, कुंभ के सूर्य में राहु का मुख आग्नेय में होता है। घर बनाने के विषे सिंह, कन्या, तुला के सूर्य में राहु का मुख ईशान में होता है। वृश्चिक, धन, मकर के सूर्य में राहु

मुख वायव्य में होता है। कुंभ, मीन, मेष के सूर्य में राहु का मुख नैर्ऋत्य में होता है। वृष, मिथुन, कर्क के सूर्य में राहु का मुख आग्नेय में होता है। जलाशय अर्थात् कुवा बावड़ी तलाब आदि बनाना हो तो मकर, कुंभ, मीन के सूर्य में राहु का मुख ईशान में होता है। मेष, वृष, मिथुन के सूर्य में राहु का मुख वायव्य में होता है। कर्क, सिंह, कन्या के सूर्य में राहु का मुख नैर्ऋत्य में होता है। तुला, वृश्चिक, धन के सूर्य में राहु का मुख आग्नेय में होता है। देवालय आदि इन तीनों में भूमि शोधन करना हो जब राहु के मुख से आक्रांत हुई दिशा से पृष्ठवर्तिनी दिशा शुभ होती है, जैसे-ईशान में राहु का मुख हो उसे पृष्ठवर्तिनी आग्नेय में प्रथम खात का आरंभ शुभफल देता है, इसी प्रकार सब जगह जानना।।९।।

अधोमुखादिनक्षत्रेषु कार्यकरणविचारः

अधोमुखैर्भैर्विदधीत खातं शिलास्तथा ऊर्द्धमुखैश्च पट्टम्। तिर्य्यङ्मुखैर्द्वारि कपाटयानं गृहप्रवेशो मृदुभि-र्ध्रुवर्क्षैः ।।१०।।

मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा ये अधोमुख नक्षत्र हैं, इन में खात करना शुभ है। आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी ये ऊर्ध्वमुख नक्षत्र हैं, इन में शिला और सरद, रुयादि धरने। अनुराधा,

मृगशिर, रेवती, चित्रा, हस्त, स्वाती, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, अश्विनी ये तिर्य्यङ्मुख नक्षत्र हैं, इनमें द्वार पर कपाट चढ़ाने शुभ हैं। मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी इनमें गृहप्रवेश शुभ है।।१०।।

गृहस्य मध्यादिभागे कूपकरणे फलविचारः

कूपे वास्तोर्मध्यदेशेऽर्थनाशस्त्वैशान्यादौ पुष्टिरैश्वर्य्यवृद्धिः । सूनोर्नाशः स्त्रीविनाशो मृतिश्च संपत्पीड़ा शत्रुतः स्याच्च सौख्यम् ।।११।।

घर के मध्यभाग में कुंवा हो तो स्वामी का धन नाश हो, ईशान में कुंवा हो तो पुष्टि, पूर्व में हो तो ऐश्वर्य की वृद्धि, अग्नि में हो तो पुत्र नाश, दक्षिण में हो तो स्त्रीनाश, नैर्ऋत में हो तो घर के स्वामी का नाश, पश्चिम में हो तो धन प्राप्ति, वायव्य में हो तो शत्रु पीड़ा, उत्तर में हो तो सुख ये फल होते हैं।।११।।

कूपखनने सूर्यनक्षत्रपरत्वेन उदकविचारः

कूपेऽर्कभान्मध्यगतैस्त्रिभिर्भैः स्वादूदकं पूर्वदिशि त्रिभिर्भैः । खंडं जलं स्वादुजलं जलक्षयं स्वादूदकं क्षारजलं शिलाजलम् ।।१२।। क्षारं जलं मृष्टजलं क्रमाद्द्वेद्वा सूर्यभात्त्रित्रिमितैः शुभाशुभम् ।।१३।।

कुंवा खोदने में जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे गिने, प्रथम

तीन नक्षत्र मध्य में हैं, इनमें खात हो तो स्वादु जल निकले। पीछे तीन नक्षत्र पूर्व में हैं, इनमें खात हो तो खंडित जल रहे। पीछे तीन नक्षत्र अग्निकोण में हैं, इनमें खात हो तो स्वादु जल निकले। पीछे तीन नक्षत्र दक्षिण में हैं, इनमें खात हो तो जल का क्षय रहे। पीछे तीन नक्षत्र नैर्ऋत में हैं, इनमें खात हो तो स्वादु जल निकले। पीछे तीन नक्षत्र पश्चिम में हैं, इनमें खात हो तो खारा जल निकले। पीछे तीन नक्षत्र वायव्य में हैं, इनमें खात हो तो पत्थर सहित जल निकले। पीछे तीन उत्तर में हैं, इनमें खात हो तो खारा जल निकले। पीछे तीन नक्षत्र ईशान में हैं, इन में खात हो तो सुंदर जल निकले। सूर्य के नक्षत्र से तीन तीन शुभाशुभ हैं।।१२—१३।।

गृहमध्ये आग्नेय्यादिक्रमेण षोडशगृहविचारः

स्नानस्य पाकशयनास्त्रभुजेश्च धान्यभाण्डारदैवत-गृहाणि च पूर्वतः स्युः । तन्मध्यतस्तु मथनाज्यपुरीष-विद्याभ्यासाख्यरोदनरतौषधसर्वधाम ।।१४।।

पूर्व में स्नान करने का घर, अग्निकोण में रसोईघर, दक्षिण में शयनघर, नैर्ऋत में शस्त्रघर, पश्चिम में भोजनघर, वायव्य में अन्न संग्रहघर, उत्तर में धनघर, अर्थात् खजाना, ईशान में देवमंदिर, पूर्व और अग्निकोण के मध्य में दही बिलोने का घर, अग्नि और दक्षिण के मध्य में घृत संग्रहघर, दक्षिण और नैर्ऋत्य के मध्य में पुरीषगृह अर्थात् पाखाना और नैर्ऋत्य

तथा पश्चिम के मध्य में विद्याघर, पश्चिम और वायव्य के मध्य में रोदनघर, वायव्य और उत्तर के मध्य में भोगघर, उत्तर और ईशान के मध्य में औषधघर, ईशान और पूर्व के मध्य में सर्वघर अर्थात् शेष रहे पदार्थों का घर इस प्रकार १६ घर बनावे।।१४।।

गृहारंभे लग्नपरत्वेन गृहायुःकथनम्

जीवार्कविच्छुक्रशनैश्चरेषु लग्नारिजामित्रसुखत्रिकेषु । स्थितिः शतं स्याच्छरदां सितार्क इज्ये तनुत्र्यंगसुते शते द्वे ।।१५।। लग्नांबरायेषु भृगुज्ञभानुभिः केन्द्रे गुरौ वर्षशतायुरालयम् । बंधौ गुरुर्व्योम्नि शशी कुजार्कजौ लाभे तदाऽशीतिसमायुरालयम् ।।१६।। स्वोच्चे शुक्रे लग्नगे वा गुरौ वेश्मगतेऽथवा । शनौ स्वोच्चे लाभगे वा लक्ष्म्या युक्तं चिरं गृहम् ।।१७।।

लग्न में बृहस्पति हो छठे सूर्य हो सातवें बुध हो चौथे शुक्र हो तीसरे शनि हो ऐसे लग्न में आरंभ किये घर की स्थिति १०० वर्ष पर्य्यंत रहती है, लग्न में शुक्र हो तीसरे सूर्य हो छठे मंगल हो पांचवें बृहस्पति हो ऐसे लग्न में आरंभ किये घर की स्थिति २०० वर्ष पर्यंत रहती है।।१५।। लग्न में शुक्र हो दशवें बुध हो ग्यारहवें सूर्य्य हो चौथे सातवें और दशवें इन स्थानों में बृहस्पति हो ऐसे लग्न में आरंभ किये घर की स्थिति १००

वर्ष पर्यंत रहती है। चौथे बृहस्पति हो दशवें चंद्रमा हो ग्यारहवें मंगल शनि हों ऐसे लग्न में आरंभ किये घर की स्थिति ८० वर्ष पर्यंत रहती है।।१६।। मीन का शुक्र या लग्न में हो अथवा कर्क का बृहस्पति चौथा हो अथवा तुला का शनि ग्यारहवां हो ऐसे लग्न में आरंभ किया घर बहुत काल पर्यंत लक्ष्मी से युत रहता है।।१७।।

द्यूनांबरे यदैकोऽपि परांशस्थो ग्रहो गृहम् । अब्दान्तः परहस्तस्थं कुर्य्याच्चेद्वर्णपोऽबलः ।।१८।। पुष्यध्रुवेन्दुहरिसर्पजलैः सजीवैस्तद्वासरेण च कृतं सुतराज्यदं स्यात् । द्वीशाश्वितक्षवसुपाशिशिवैः सशुक्रैर्वारे सितस्य च गृहं धनधान्यदं स्यात् ।।१९।।

एक भी ग्रह अत्यंत उत्कृष्ट शुभफलदाता परांश में स्थित होता हुआ जो सातवां हो अथवा दशवां हो तब यह ग्रह एक वर्ष के भीतर ही घर को दूसरे के हाथ में प्राप्त कराता है-जो ब्राह्मण आदि वर्ण का स्वामी बलहीन हो तो।।१८।। पुष्य तीनों उत्तरा मृगशिर श्रवण आश्लेषा पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रों पर बृहस्पति हो और बृहस्पतिवार में आरंभ किया घर पुत्र और राज्य को देता है। विशाखा अश्विनी चित्रा धनिष्ठा शतभिषा आर्द्रा इन नक्षत्रों पर शुक्र स्थित हो और शुक्रवार को आरंभ किया घर धन और धान्य को देता है।।१९।।

वास्तुपुरुषोत्पत्तिकथनम्

वास्तुज्ञानमथातः कमलभवान्मुनिपरंपराप्राप्तम् ।
क्रियतेऽधुना मयेदं विदग्धसांवत्सरप्रीत्यै ॥२०॥
किमपि किल भूतमभवत्सन्धानं रोदसी शरीरेण ।
तदमरगणेन सहसा विनिगृह्याऽधोमुखं न्यस्तम् ॥२१॥
यत्र च येन गृहीतं विबुधेनाधिष्ठितः स तत्रैव ।
तदमरमयं विधाता वास्तुनरं कल्पयामास ॥२२॥

इसके अनंतर वास्तु ज्ञान जो ब्रह्माजी से लेकर परंपरागत क्रम से गर्गमुनि आदि के द्वारा प्राप्त हुआ है, अब हम कुशल ज्योतिषियों को प्रसन्न करने के लिये कहते हैं॥२०॥ पहले पृथिवी और आकाश को अपने देह से रोकता हुआ कोई प्राणी उपजा था,उसको देवताओं ने शीघ्र ही पकड़ अधोमुख बना पृथिवी पर गिराया॥२१॥ जो अंग जिस देवता ने पकड़ा वह उसी अंग पर बैठ गया, उस प्राणी को ब्रह्माजी ने वास्तुपुरुष ठहराया॥२२॥

राजादीनां गृहेषु विस्तारदैर्घ्यप्रमाणकथनम्

उत्तममष्टाभ्यधिकं हस्तशतं नृपगृहं पृथुत्वेन ।
अष्टाष्टोनान्येवं पंच सपादानि दैर्घ्येन ॥२३॥ षड्भिः षड्भिर्हीना सेनापतिसद्मनां चतुःषष्टिः ।पंचैवं विस्ता-रात्षड्भागसमन्वितादैर्घ्यम् ॥२४॥ षष्टिश्चतुर्विहीना

वेश्मानः सन्ति पंच सचिवस्य । स्वाष्टांशयुताद्दैर्घ्यं तदर्धतो राजमहिषीणाम् ॥२५॥ षड्भिः षड्भिश्चैवं-युवराजस्यापवर्जिताशीतिः । त्र्यंशान्विता च दैर्घ्यं पंच तदर्धैस्तदनुजानाम् ॥२६॥ नृपसचिवानां तुल्यं साम-न्तप्रवरराजपुरुषाणाम् । नृपयुवराजविशेषः कंचुकि-वेश्याकलाज्ञानाम् ॥२७॥

राजा का घर एक सौ आठ हाथ का उत्तम होता है और इसी चौड़ाई में आठ आठ हाथ कम कर चार घर अन्य बनते हैं। इसी प्रकार ये पांच घर राजा के बनते हैं। इन सब घरों की लंबाई अपनी अपनी चौड़ाई से सवाई होनी चाहिये, जैसे उत्तम घर लम्बाई १३५ हाथ और चौड़ाई १०८ हाथ होनी उचित है॥२३॥ राजा के सेनापति का चौसठ हाथ चौड़ा उत्तम घर होता है, फिर छः छः हाथ कम कर और चार घरों की चौड़ाई होती है, इसी प्रकार सेनापति के पांच घर हैं, इनकी चौड़ाई में जो अपना २ छठा भाग जोड़ दिया जावे तो उन घरों की लम्बाई का प्रमाण हो सकता है॥२४॥ राजा के मंत्री का साठ हाथ चौड़ा उत्तम घर होता है फिर साठ में चार चार कम कर चार घरों का प्रमाण होता है। इसी प्रकार मंत्री के पांच घर हैं, इन घरों की चौड़ाई में अपना अपना अष्टमांश जोड़ दे तो इनकी लंबाई का प्रमाण हो सकता है। इन पांच

घरों की चौड़ाई लंबाई को आधे आधे प्रमाण के समान चौड़े और लम्बे पांच घर राजा की पटरानी के होते हैं।।२५।। युवराज का उत्तम घर अस्सी हाथ चौड़ा होता है फिर छः कम कर अन्य चार घरों की चौड़ाई का प्रमाण होता है। युवराज के पांच घर हैं, इनकी चौड़ाई लम्बाई के आधे २ के तुल्य लम्बे चौड़े पांच घर युवराज के छोटे भाइयों के होते हैं।।२६।। राजा और मंत्री के पांच घरों की लम्बाई चौड़ाई का जो अंतर हो उतने लम्बे चौड़े पांच घर मांडलिक राजा और राजा के प्रधान पुरुषों के होते हैं, राजा के पांच घर और युवराज के पांच घरों की लम्बाई चौड़ाई के अंतर के समान लम्बे चौड़े पांच घर कंचुकी (सिपाही) वेश्या और कला जाननेवालों के होते हैं।।२७।।

अध्यक्षाधिकृतानां सर्वेषां कोशभोगयोस्तुल्यम् ।
युवराजमंत्रिविवरं कर्मांताध्यक्षदूतानाम् ।।२८।।
चत्वारिंशद्धीना चतुश्चतुर्भिस्तु पंच यावदिति ।
षड्भागयुतादैर्ध्यं दैवज्ञपुरोधसोर्भिषजः ।।२९।।वास्तुनि यो विस्तारः स एव चोच्छ्रायनिश्चयः शुभदः। शालकेषु गृहेष्वपि विस्ताराद्विगुणितं दैर्घ्यम् ।।३०।।

घोड़ों की शाला हाथियों की शाला इन आदि के मालिक और अन्यकार्यों के अधिकारी इन सबके घर का प्रमाण कोश

घर और भोग घर के प्रमाण होता है। युवराज और मंत्री के घर की लंबाई चौड़ाई के अंतर के तुल्य कर्मशाला का स्वामी और दूतों के घर की लंबाई चौड़ाई होती है।।२८।। ज्योतिषी पुरोहित और वैद्य इनका उत्तम घर चालीस हाथ चौड़ा होता है फिर चार कम कर अन्य चार घरों की चौड़ाई होती है, इस प्रकार इनके पांच भी घर बनते हैं। इनकी चौड़ाई में अपना छठा हिस्सा जोड़ दे तो इनकी लंबाई का प्रमाण होता है।।२९।। घर की चौड़ाई के समान ऊंचाई भी हो तो शुभ है, वह लंबाई चौड़ाई चार शालों वाले घर की कही। एक शाला वाला घर हो तो उसकी चौड़ाई से दूनी लंबाई होती है।।३०।

विप्रादीनां गृहप्रमाणकथनम्

चातुर्वर्ण्यव्यासौ द्वात्रिंशत्स्याच्चतुश्चतुर्हीना: ।आषोड-शादिति परं न्यूनतरमतीव हीनानाम् ।।३१।। सदशांशं विप्राणां क्षत्रस्याष्ठांशसंयुतं दैर्घ्यम् । षड्भागयुतं वैश्यस्य भवति शूद्रस्य पादयुतम् ।।३२।। नृपसेनापति-गृहयोरंतरमानेन कोशरतिभवने । सेनापतिचातुर्वर्ण्य-विवरतो राजपुरुषाणाम् ।।३३।।

ब्राह्मण के मुख्य घर की चौड़ाई बत्तीस हाथ और चार हाथ कम कर अन्य चार घर होते हैं, क्षत्रिय के मुख्य घर की चौड़ाई २८ हाथ होती है। इसमें २ कम कर अन्य तीन घर

होते हैं। वैश्य के मुख्य घर की चौड़ाई चौबीस हाथ है। इसमें २ कम कर अन्य २ घर बनते हैं शूद्र का मुख्य घर २० हाथ चौड़ा है, इसमें चार हाथ कम कर एक घर अन्य बनता है। इस प्रकार सोलह हाथ की चौड़ाई तक घर बनते हैं, इसमें भी चौड़ाई में कम घर नीचों का होता है।। ३१।। ब्राह्मण के घर की चौड़ाई में उसका दशांश जोड़ दे तो लंबाई हो जाती है। क्षत्रिय के घर की चौड़ाई में आठवां हिस्सा जोड़ दे और वैश्य की में छठा हिस्सा और शूद्र की में चौथा हिस्सा जोड़ने से उसकी लंबाई हो सकती है ऐसे ब्राह्मण के पांच घर क्षत्रिय के ४ घर वैश्य के ३ घर और शूद्र का एक घर होता है।। ३२।। राजा और सेनापति के घर की लंबाई चौड़ाई के अंतर के समान लंबाई चौड़ाई खजाना घर और भोग घर की होती हैं। सेनापति का पहला घर और ब्राह्मण का घर इनके अंतर के तुल्य ब्राह्मण राजपुरुष का घर होता है। सेनापति का दूसरा घर और क्षत्रिय का घर इनके अंतर के स्थान क्षत्रियराज पुरुष का घर होता है। सेनापति का तीसरा घर और वैश्य का घर इन्हों के अंतर के समान वैश्य राजपुरुष का घर होता है। सेनापति का चौथा घर और शूद्र का घर इन्हों के अंतर के समान शूद्र राजपुरुष का घर होता है।। ३३।।

पारशवांबष्ठादीनां गृहप्रमाणकथनम्

अथ पारशवादीनां स्वमानसंयोगदलसमं भवनम् ।

हीनाधिकं स्वमानादशुभकरं वास्तु सर्वेषाम् ॥३४॥
पश्वाश्रमिणाममितं धान्यायुधवह्निरतिगृहाणां च ।
नेच्छन्ति शास्त्रकारा हस्तशतादुच्छ्रितं परतः ॥३५॥
सेनापतिनृपतीनां सप्ततिसहिते द्विधाकृते व्यासे ।
शालाचतुर्दशहृते पंचत्रिंशद्धृतेऽलिन्दः ॥३६॥

ब्राह्मण से शूद्रस्त्री में जो उत्पन्न हो वह पारशव कहाता है। इस भांति और भी अंबष्ठ आदि वर्ण संकरों के घर की लंबाई चौड़ाई उनके माता पिता के जो वर्ण उनके घर की लंबाई चौड़ाई के जोड़ का आधा होता है। जैसा ब्राह्मण और शूद्र के घर के मान को जोड़ आधा करे तो पारशवर कें घर का मान होता है। ऐसे ही औरों का भी जानो। कहे हुये मान से जो वास्तु हीन अथवा अधिक हो वह सबके लिये अशुभ होता है॥३४॥ पशुओं के परिव्राट् आदि आदमियों के घर का कुछ मान नहीं चाहें जितना लबा चौड़ा कर लेवे। इसी प्रकार धान्य शस्त्र और तिनके घर का भी कुछ नियम नहीं है और वास्तुशास्त्र को जाननेवाले सौ हाथ से अधिक घर की ऊंचाई नहीं चाहते हैं॥३५॥ सेनापति और राजा के घर की चौड़ाई में ७० जोड़ दो स्थान पर लिखे एक स्थान में चौदह का भाग देवे जो हाथ और अंगुल लब्ध हो वह शाला का नाम होता है और दूसरे स्थान में पैंतीस के भाग से लब्ध फल अलिन्द का

नाम है। शालाशब्द करके घर के भीतर का प्रमाण लेना और शाला के रीति के बाहिर जो गम निकालि जा से घिरी हुई अंगन के सम्मुख बनती है उसको अलिन्द कहते हैं।।३६।।

हस्तद्वात्रिंशादिषु चतुश्चतुस्त्रिस्त्रिकाः शालाःसप्तदश-त्रितयतिथित्रयोदशकृताऽङ्गुलाऽभ्यधिकाः।।३७।।त्रि-त्रिद्विद्विद्विसमाः क्षयक्रमादङ्गुलानि चैतेषाम् । त्र्येका विंशतिरष्टौ विंशतिरिष्टादश त्रितयम् ।।३८।।

बत्तीस आदि जो ब्राह्मण आदि वर्णों के घर का प्रमाण कहा उनकी शाला का प्रमाण यह है–कि ब्राह्मण के प्रधान घर में चार हाथ सत्रह अंगुल शाला की चौड़ाई होती है, दूसरे घर में चार हाथ तीन अंगुल, तीसरे में तीन हाथ पन्द्रह अंगुल, चौथे में तीन हाथ तेरह अंगुल और ब्राह्मण के पांचवें घर में शाला का प्रमाण तीन हाथ चार अंगुल होता है। ब्राह्मण का दूसरा घर क्षत्रिय का प्रधान है, क्षत्रिय का दूसरा घर वैश्य का प्रधान है, वैश्य का दूसरा घर शूद्र का प्रधान घर है, इस भांति सब वर्णों के घर में शाला का प्रमाण जानो।।३७।। ब्राह्मण के प्रधान घर में तीन हाथ उन्नीस अंगुल अलिन्द का प्रमाण है, दूसरे घर में तीन हाथ आठ अंगुल, तीसरे में दो हाथ बीस अंगुल, चौथे में दो हाथ अठारह अंगुल और ब्राह्मण के पांचवें घर में अलिंद का प्रमाण दो हाथ तीन अंगुल है। इन हाथों के

साथ गृहक्रम से ये अंगुल कहे हैं। इस आर्याछंद में क्षयशब्द गृह का वाचक है।।३८।।

गृहस्य सोष्णीषादिनामकथनम्

शालात्रिभागतुल्या कर्त्तव्या वीथिका बहिर्भवनात् ।
यद्यग्रतो भवति सा सोष्णीषं नाम तद्वास्तु ।।३९।।
सापाश्रयमिति पश्चात् सावष्टंभं तु पार्श्वसंस्थितया।सु-
स्थितमिति च समंताच्छास्त्रज्ञैः पूजिताः सर्वाः।।४०।।
विस्तारषोडशांशः सचतुर्हस्तो भवेद् गृहोच्छ्रायः ।
द्वादशभागेनो नोभूमौ भूमौ समस्तानाम् ।।४१।।

शाला की तिहाई के तुल्य घर के बाहर वीथी बनावे, जो वह वीथी वास्तु के आगे हो तो उस वास्तु को सोष्णीष कहते हैं, पिछली ओर हो तो सापाश्रय, दहिने बायें हो तो सावष्टंभ और वास्तु के चारों और वीथी हो तो उस वास्तु को सुस्थित कहते हैं। ये सब वीथी शास्त्र के जाननेवालों ने शुभ कही हैं।।३९-४०।। घर की चौड़ाई के मान में सोलह का भाग देकर जो लब्ध आवे उसमें चार हाथ और जोड़े वही घर की पहली भूमिका टुकड़े की ऊंचाई का प्रमाण होता है, उसमें उसका द्वादशांश घटा देवे तो दूसरी भूमिका की ऊंचाई हो जाती है, इसी भांति द्वादशांश घटाते २ तीसरी चौथी आदि सब भूमिकाओं की ऊंचाई का मान होता है।।४१।।

गृहभित्तिप्रमाणकथनम्

व्यासात्षोडशभागा सर्वेषां सद्मनां भवति भित्तिः ।
पक्वेष्टकाकृतानां दारुकृतानां तु न विकल्पः ॥४२॥

सब घरों की भीत का प्रमाण घर की चौड़ाई के षोड़शांश के तुल्य होता है, यह नियम पक्की ईंटों के घर में है, काठ के घर में भीत की चौड़ाई लंबाई ऊंचाई आदि का कुछ नियम नहीं॥४२॥

द्वारप्रमाणविचारः

एकादशभागयुतः स सप्ततिर्नृपबलेशयोर्व्यासः ।
उच्छ्रायोऽङ्गुलतुल्यो द्वारस्यार्द्धेन विष्कम्भः ॥४३॥
विप्रादीनां व्यासात् पञ्चांशोऽष्टादशांगुलसमेतः ।
साष्टांशो विष्कम्भो द्वारस्य त्रिगुण उच्छ्रायः ॥४४॥

राजा और सेनापति के घर की चौड़ाई में उसका एक दशांश जोड़कर सत्तर और जोड़े, जो अंक हो उतने अंगुल ऊंचा उनके घर का द्वार बनाना चाहिये और द्वार की ऊंचाई से आधी द्वार की चौड़ाई रखनी चाहिये॥४३॥ ब्राह्मण आदि वर्णों के घर की जो चौड़ाई उसका पंचमांश लेवे, लब्ध फल को अंगुल माने, उसमें अठारह अंगुल जोड़ देवे, फिर उसका अष्टमांश उसी में जोड़े, इस प्रकार जितने अंगुल हो वह उनके द्वार. की चौड़ाई से तिगुणी द्वार की ऊंचाई होती है॥४४॥

उच्छ्रायहस्तसंख्यापरिमाणान्यंगुलानि बाहुल्यम् । शाखाद्वयेऽपि कार्यं सार्द्धं तत्स्यादुदुम्बरयोः ।उच्छ्राया-त्सप्तगुणादशीतिभागः पृथुत्वमेतेषाम् ।।४५।।

द्वार की चौखट की दोनों भुजाओं को शाखा कहते हैं और ऊपर के काष्ठ को सिर धर और नीचे के काष्ठ को देहली तथा उदुम्बर भी कहते हैं। द्वार जितने हाथ ऊंचा होवे उतने अंगुल शाखाओं की मोटाई रखनी चाहिये और शाखाओं से ड्योढी मोटाई उदुम्बरों की होती है। ऊंचाई को सात से गुणाकर अस्सी का भाग देने से जो लब्ध मिले वह इन सबकी चौड़ाई है।।४५।।

स्तंभप्रमाणकथनम्

नवगुणितेऽशीत्यंशः स्तम्भस्य दशांशहीनोऽग्रे ।।४६।। समचतुरस्रो रुचको वज्रोष्टाभिर्द्विवज्रको द्विगुणः । द्वात्रिंशता तु मध्ये प्रलीनको वृत्त इति वृत्तः ।।४७।।

स्तंभ की ऊंचाई को नौं से गुणाकर अस्सीका भाग देने से जो लब्ध हो वह स्तंभ के मूल की मोटाई होती है और उसका दशांश उसमें घटावे तो स्तभं के अग्रभाग की मोटाई का मान होता है। जो स्तंभ मध्य भाग में चतुरस्र हो वह रुचक कहाता है, अष्टास्र हो वह वज्र कहाता है, षोडशास्र हो वह द्विवज्रक और बत्तीस कोण का मध्य में हो वह

प्रलीनक और जो स्तंभ बीच से गोल हो वह वृत्त कहाता है।।४६—४७।।

स्तंभं विभज्य नवधा वहनं भागो घटोऽस्य भागोऽन्यः। पद्मं यथोत्तरोष्ठं कुर्याद्भागेन भागेन ।।४८।। स्तंभसमं बाहुल्यं भारतुलानामुपर्युपर्यासाम् ।। भवति तुलोपतुलानामूनं पादेन पादेन ।।४९।।

स्तंभ के समान नौ भाग कर सबसे नीचे के भाग को वहन बनावे, भूमि पर जिसके ऊपर स्तंभ रहता है उसको वहन कहते हैं। वहन के ऊपर एक भाग में घट बनावे, उसके ऊपर के भाग में कमल बनावे, उंसके ऊपर के भाग में उत्तरोष्ठ बनाकर शेष पांच भागों को चतुरस्र आदि बना देवे। शोभा के लिये जिसमें अनेक प्रकार के चित्र बनाये जाते हैं उसको उत्तरोष्ठ कहते हैं।।४८।। स्तंभ के ऊपर जो तिरछा काष्ठ रखा जाता है उसको भारतुला कहते हैं और भारतुला के ऊपर जो और काष्ठ लगाये जाते हैं उनकी तुलोपतुल संज्ञा है भार तुला की मोटाई स्तंभ की मोटाई के तुल्य होती है और तुलोपतुलों की मोटाई चौथाई २ घटाने से होती है।।४९।।

अलिंदपरत्वेन गृहनामकथनम्, द्वारकरणविचारश्च

अप्रतिसिद्धालिन्दं समन्ततो वास्तु सर्वतोभद्रम् । नृपविबुधसमूहानां कार्यं द्वारैश्चतुर्भिरपि ।।५०।।

नन्द्यावर्तमलिन्दैः शालाकुड्यात्प्रदक्षिणान्तगतैः । द्वारं पश्चिममस्मिन्विहाय शेषाणि कार्याणि ।।५१।। द्वारालिंदोऽन्तगतः प्रदक्षिणोऽन्यः शुभस्ततश्चान्यः । तद्वच्च वर्द्धमाने द्वारं तु तन्न दक्षिणे कार्यम् ।।५२।।अपरेऽन्तगतोऽलिन्दः प्रागन्तगतौ तटस्थितौ चान्यौ । तदवधि विधृतश्चान्यः प्राग्द्वारं स्वस्तिके शुभदम् ।।५३।।

जिस वास्तु में चारों और अलिंद बनाये जावें वह चार द्वारों करके युक्त सर्वतो भद्रनाम वास्तु राजा और देवताओं के समूह के लिये बनाने चाहिये।।५०।। शाला की भीत से लेकर प्रदक्षिण क्रम से जो अलिन्द उन करके युक्त वास्तु नंद्यावर्त कहाता है। उसमें पश्चिम दिशा को छोड़ शेष तीन दिशाओं में तीन द्वार रखें।।५१।। प्रधान वास्तु के द्वार का अलिन्द अंतर्गत अर्थात् दक्षिणोत्तर शालासंलग्न बनावे। दूसरा शुभ अलिन्द प्रदक्षिण बनावे और उसके अंत में एक और अलिन्द बनावे और दक्षिण दिशा में द्वार न रखे, शेष तीन दिशाओं में रखे। वह वास्तु वर्द्धमान कहाता है।।५२।। पश्चिमदिशा का अलिन्द दक्षिणोत्तर शालासंलग्न बनावे, उसे पश्चिम अलिन्द उत्पन्न और दो अलिन्द पूर्व दिशा की शाला से लगे हुये बनावे, उन दोनों के मध्य में चौथा अलिन्द बनावे। इस वास्तु का नाम स्वस्तिक है। इसमें पूर्व दिशा का द्वार

अशुभ होता है, इसलिये पूर्व को छोड़ शेष तीन दिशाओं में द्वार रखे।।५३।।

प्राक्पश्चिमावलिंदावन्तगतौ तदवधिस्थितौ शेषौ । रुचके द्वारं न शुभदमुत्तरतश्चातिशस्तानि ।।५४।। श्रेष्ठं नंद्यावर्तं सर्वेषां वर्द्धमानसंज्ञं च । स्वस्तिकरुचके मध्ये शेषं शुभदं नृपादीनाम्।।५५।।उत्तरशालाहीनं हिरण्यनाभं त्रिशालकं धन्यम् । प्राक्छालया वियुक्तं सुक्षेत्र वृद्धिदं वास्तु ।।५६।। याम्याहीना चुल्ली त्रिशालकं वित्तनाशकरमेतत् । पक्षघ्नमपरयावर्जितं सुतध्वंसवैरकरम् ।।५७।।

पूर्व पश्चिम के दो अलिन्द दक्षिणोत्तर शाला से लगे हुये बनावे। दक्षिण उत्तर अलिन्द से उन दोनों से लगे हुये बनावे। यह रुचकनाम वास्तु कहाता है, इसमें उत्तर दिशा का द्वार शुभ नहीं होता, इसलिये उत्तर को छोड़ शेष तीन दिशाओं में द्वार बनावे।।५४।। नंद्यावर्त और वर्धमान ये दो सब वर्णों के लिये श्रेष्ठ हैं। स्वस्तिक और रुचक सबके लिये मध्यम हैं, न शुभ और न अशुभ और सर्वतोभद्र केवल राजा राजमंत्री आदि के लिये ही शुभ है।।५५।। जिस वास्तु में उत्तर की ओर शाला न बने शेष तीन दिशाओं में शाला हो वह त्रिशालक हिरण्यनाभ नामक शुभ होता है। पूर्व शाला करके हीन

त्रिशालक सुक्षेत्र नामक धन पुत्र आदि की वृद्धि करता है॥५६॥ दक्षिण दिशा की शाला जिसमें न हो वह त्रिशालक चुल्लीनामक धन का नाश करता है। पश्चिम दिशा की शाला करके रहित त्रिशालक पक्षघ्ननामक पुत्र का नाश और वैर करता है॥५७॥

सिद्धार्थमपरयाम्ये यमशूर्पे पश्चिमोत्तरे शाले । दण्डाख्यमुदक्पूर्वे वाताख्यं प्राग्युता याम्या ॥ पूर्वापरे तु शाले गृहचुल्ली दक्षिणोत्तरे काचम् ॥५८॥

पश्चिम और दक्षिण में दो ही शाला जिस घर में हो वह सिद्धार्थ कहाता है, पश्चिम और उत्तर में शाला हो वह यमशूर्प है, उत्तर पूर्व में जिसमें दो शाला हो उसका नाम दंड है, पूर्व दक्षिण में दो शाला हो वह बात कहाता है। पूर्व पश्चिम में दो शाला हो उसकी गृहचुल्ली संज्ञा है और दक्षिण और उत्तर में जिस घर में दो शाला हो उस द्विशालाक को काच कहते हैं॥५८॥

नामपरत्वेन फलविचारः

सिद्धार्थेऽर्थावाप्तिर्यमशूर्पे गृहपतेर्मृत्युः ॥५९॥ दण्डवधौ दण्डाख्ये कलहोद्वेगः सदैव वाताख्ये।वित्तविनाशश्चुल्ल्यां ज्ञातिविरोधः स्मृतः काचे ॥६०॥

सिद्धार्थनाम द्विशाल में धन की प्राप्ति होती है, यमशूर्प में

घर के स्वामी की मृत्यु होती है।।५९।। दण्डनाम द्विशाल में दण्ड और वध होता है, वात में सदा कलह और उद्वेग होता है, गृहचुल्ली में धन का नाश और काच में बंधुओं से विरोध होता है।।६०।।

एकाशीतिकोष्ठ गृहस्येशान्यादिक्रमेण देवतास्थितिकथनम्

एकाशीतिविभागे दश दश पूर्वोत्तरायता रेखाः । अन्तस्त्रयोदश सुरा द्वात्रिंशद्बाह्यकोष्ठस्थाः ।।६१।। शिखिपर्जन्यजयन्तेन्द्रसूर्यसत्या भृशोऽन्तरिक्षश्च।ऐशान्याद्याः क्रमशो दक्षिणपूर्वेऽनिलः कोणे ।।६२।। पूषा वितथबृहत्क्षतयमगन्धर्वाख्यभृंगराजमृगाः । पितृदौवारिकसुग्रीवकुसुमदन्ताम्बुपत्यसुराः ।।६३।। शोषोऽथ पापयक्ष्मा रोगः कोणे ततोऽहिमुख्यौ च । भल्लाटसोमभुजगास्ततोऽदितिर्दितिरिति क्रमशः ।।६४।।

इक्यासीपद का वास्तु कहते हैं, क्षेत्र में पूर्वपश्चिम दश रेखा और दक्षिणोत्तर दश रेखा करने से इक्यासी कोठे बन जाते हैं, इस एकाशीति पद क्षेत्र में तेरह देवता भीतर हैं और बत्तीस बाहर के कोष्ठों में है।।६१।। वास्तु के बाहर के चारों ओर के कोष्ठों में ईशानकोण से लेकर क्रम से ये देवता हैं–शिखी, पर्जन्य, जयंत, इन्द्र, सूर्य, सत्य, भृश और अंतरिक्ष, फिर अग्निकोण से वायु, पूषा।।६२।। वितथ, बृहत्क्षत, यम, गंधर्व,

भृंगराज और मृग ये दक्षिण दिशा में हैं, नैर्ऋत्य कोण से पितृ दौवारिक, सुग्रीव, कुसुमदंत, वरुण, असुर॥६३॥ शोष और पापयक्ष्मा ये पश्चिम के देवता हैं। वायव्य से लेकर रोग, अहिमुख्य, भल्लाट, सोम, भुजग, अदिति और दिति ये उत्तर के देवता हैं। इस भांति क्रम से बत्तीस देवता स्थित हैं॥६४॥

गृहस्यान्तर्गतकोष्ठाधिपतिकथनम्

मध्ये ब्रह्मा नवकोष्ठकाधिपोऽस्यार्यमास्थितः प्राच्याम् । एकांतरात्प्रदक्षिणमस्मात्सविता विवस्वांश्च ॥६५॥ विबुधाधिपतिस्तस्मान्मित्रोऽन्येषां राजयक्ष्मनामा च । पृथ्वीधरापवत्साविथ्येते ब्रह्मणः परिधौ ॥६६॥ आपो नामैशाने कोणे हौताशने च सावित्रः । जय इति च नैर्ऋते रुद्र अनिलेऽभ्यंतरपदेषु ॥६७॥

अब मध्य के देवता कहते हैं—वास्तु के मध्य में नौ कोठो का अधिपति ब्रह्मा स्थित है, इससे पूर्व दिशा में अर्य्यमा स्थित हैं, अर्यमा से प्रदक्षिण क्रम करके एक एक कोष्ठ के अंतर से सविता, विवस्वान्॥६५॥ इन्द्र, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर और आपवत्स ये आठ देवता एक एक कोष्ठ के अंतर से ब्रह्मा के परिधि में अर्थात् चारों ओर स्थित हैं॥६६॥ ईशानकोण में पर्जन्य के नीचे, आप अग्निकोण में अंतरिक्ष के नीचे सावित्र, नैर्ऋत्य में दौवारिक के नीचे जय और वायव्यकोण में पाप-

यक्ष्मा के नीचे रुद्र स्थित हैं, ये देवता भीतर के कोष्ठ में स्थित हैं।।६७।।

आपस्तथाऽपवत्सः पर्जन्योऽग्निर्दितिश्च वर्गोऽयम् । एवं कोणे कोणे पदिकाः स्युः पंचपंच सुराः ।।६८।। बाह्या द्विपदाः शेषास्ते विबुधा विंशतिः समाख्याताः । शेषाश्चत्वारोऽन्ये त्रिपदादि चार्यमाद्यास्ते ।।६९।।

आप, आपवत्स, पर्जन्य, अग्नि और दिति यह देव समूह एक एक कोष्ठ का स्वामी है, इसी भांति कोण कोण में पांच पांच देवता एक एक पद के स्वामी हैं, जैसे ये ईशानकोण में पांच हैं, इसी भांति अग्निकोण में सविता, सावित्र, अंतरिक्ष, वायु और पूषा, नैर्ऋत्यकोण में इन्द्र, जय, दौवारिक, पितृ, मृग; वायव्यकोण में राजयक्ष्मा, रुद्र, पापयक्ष्मा रोग और अह्य ये पांच देवता एक पदिक हैं।।६८।। शेष बाहर के कोष्ठों में स्थित देवता दो पद के स्वामी हैं। जयंत, इन्द्र, सूर्य, सत्य और भृश ये पूर्व में; वितथ, बृहत्क्षत, गंधर्व, यम और भृंगराज ये पांच दक्षिण में; सुग्रीव, कुसुमदन्त, वरुण, असुर और शेष ये पश्चिम में; मुख्य भल्लात, सोम, भुजग और द्वितीये पांच देवता उत्तर में द्विपदिक हैं; शेष—अर्यमा, विवस्वान्, मित्र और पृथ्वीधर ये चार देवता ब्रह्मा से पूर्व आदि दिशाओं में स्थित तीन तीन पद के स्वामी हैं अर्थात् जिस पद में बैठे हैं उसके दोनों ओर एक पद और भी इनका है,

बीच में नौ पद का स्वामी ब्रह्मा है, इस भांति के सब देवता ४५ हैं।।६९।।

वास्तुपुरुषस्थितिकथनम्

पूर्वोत्तरदिङ्मूर्द्धापुरुषोप्यवाङ्मुखोऽस्यशिरसिशिखी।
आपो मुखे स्तनेऽस्यार्यमा ह्युरस्यापवत्सश्च ।।७०।।
पर्जन्याद्या बाह्या दृक्छ्रवणोरस्थलांसगा देवाः ।
सत्याद्याः पंच भुजे हस्ते सविता च सावित्रः ।।७१।।
वितथो बृहत्क्षतयुतः पार्श्वे जठरे स्थितो विवस्वांश्च ।
ऊरू जानू जंघे स्फिगिति यमाद्यैः परिगृहीताः ।।७२।।
एते दक्षिणपार्श्वे स्थानेष्वेवं च वामपार्श्वस्थाः । मेढ्रे शक्रजयंतौ हृदये ब्रह्मा पिताऽङ्घ्रिगतः ।।७३।।

यह वास्तुपुरुष अधोमुख है और इसका शिर ईशान कोण में है, इसके शिर पर शिखी स्थित है, मुख पर आप, स्तन पर आर्यमा, छाती पर आपवत्स स्थित है।।७०।। पर्जन्य आदि बाहर के चार देवता अर्थात् पर्जन्य, जयंत, इन्द्र और सूर्य ये चार क्रम से नेत्र, कर्ण, उरस्थल और स्कंध पर स्थित हैं। सत्य आदि पांच देवता भुजा पर स्थित हैं। सविता और सावित्र हाथ पर स्थित हैं।।७१।। वितथ और बृहत्क्षत पार्श्वपर स्थित हैं। विवस्वान् उदर पर स्थित है। यम ऊरू पर, गन्धर्व जानु पर, भृंगराज जंघा पर और मृग स्फिक् के ऊपर स्थित

है।।७२।। ये देवता वास्तु पुरुष के दाहिने और स्थित हैं, इसी भांति बाईं ओर भी देवता स्थित हैं अर्थात् वामस्तन पर पृथिवीधर, नेत्र पर दिति, कर्ण पर अदिति, बाईं ओर की छाती पर भुजंग, स्कंध पर सोम, भुज पर भल्लात मुख्य अहि रोग और पापयक्ष्मा ये पांच स्थित हैं। वामहस्त पर रुद्र और राजयक्ष्मा, पार्श्व पर शोष और असुर, ऊरू पर वरुण, जानु पर कुसुमदंत, जंघा पर सुग्रीव और स्फिक् (कूला) ऊपर दौवारिक स्थित हैं। ये वास्तु पुरुष के वामभाग में स्थित हैं। वास्तु पुरुष के लिंग पर इन्द्र और जयंत स्थित हैं। हृदय पर ब्रह्मादि स्थित हैं और पैरों पर पितृ स्थित हैं। यह नगर ग्राम घर आदि में इक्यासी पद के वास्तु का विभाग कहा है।।७३।।

चतुःषष्टिकोष्ठगृहस्यदेवताकथनम्

अष्टाष्टकपदमथवा कृत्वा रेखाश्च कोणगास्तिर्यक् ।
ब्रह्मा चतुष्पदोऽस्मिन्नर्धपदा ब्रह्मकोणस्थाः ।।७४।।
अष्टौ च बहिः कोणेष्वधः पदास्तुह्युभयस्थिताः सार्धाः
। उक्तेभ्यो ये शेषास्ते द्विपदा विंशतिस्ते च ।।७५।।

अब चतुःषष्टिपद वास्तु कहते हैं—अथवा चौसठ कोष्ठों का ही वास्तु बनावे अर्थात् नौ रेखा पूर्व पश्चिम में और नौ रेखा दक्षिणोत्तर खैंचकर चौसठ कोठे वास्तु में बनावे और चारों कोणों में कर्ण के आकार दो तिरछी रेखा खैंच देवे, इस पद में ब्रह्मा चार कोष्ठों का स्वामी है, ब्रह्मा के कोणों में

स्थित आठ देवता आप, आपवत्स, सविता, सावित्र, इन्द्र, जयंत, राजयक्ष्मा और रुद्र॥७४॥ और बाहर के कोठे में स्थित आठ देवता-शिखी, अंतरिक्ष, वायु, मृग, पितृ, पापयक्ष्मा, रोग और द्वितीये सब अर्धपदिक अर्थात् आधे आधे कोष्ठ के स्वामी हैं और इनके दोनों ओर स्थित पर्जन्य, भृश, भृंगराज, दौवारिक, शेषनाग और आदीति ये सार्धपदिक अर्थात् डेढ़ डेढ़ पद के स्वामी हैं और शेष बीस देवता जयंत, इन्द्र, सूर्य, सत्य, वितथ, बृहत्क्षत, यम, गंधर्व, सुग्रीव, कुसुमदंत, वरुण, असुर, मुख्य, भल्लात, सोम, भुजंग, अर्यमा, विवस्वान्, मित्र, पृथ्वीधर ये सब द्विपद अर्थात् दो दो कोष्ठ के स्वामी हैं, वह चौसठ पद का वास्तु कहा है॥७५॥

गृहमध्ये शल्यकथनम्

संपाता वंशानां मध्यानि समानि यानि च पदानाम् । मर्माणि तानि विद्यान्न तानि परिपीडयेत्प्राज्ञः ॥७६॥ तान्यशुचिभाण्डकीलस्तम्भाद्यैः पीडितानि शल्यैश्च । गृहभर्तुस्तत्तुल्ये पीडामङ्गे प्रयच्छन्ति ॥७७॥ कण्डूयते यदङ्गं गृहभर्तुर्यत्र वामराहुत्याम् । अशुभं भवेन्निमित्तं विकृतिर्वाग्नेः सशल्यं तत् ॥७८॥

वंशों के संपात जो आगे कहेंगे और पदों के सम और मध्य ये वास्तु के मर्म जाने। बुद्धिमान् पुरुष कभी इनको पीड़न न करे॥७६॥ ये वास्तु के मर्म स्थान अपवित्र भाण्ड-कील-स्तंभ

आदि करके और शल्य जो आगे कहेंगे उन करके पीड़ित हो तो घर के स्वामी के उस उस अंग में अर्थात् वास्तु का जो अंग हो उसी अंग में पीड़ा करते हैं।।७७।। होम के अथवा प्रश्न के समय घर का स्वामी जिस अपने अंग को खुजलावे वास्तु के उस अंग में शल्य होता है। शिखी आदि जिस देवता के आहुति देने के समय छीक रोदन अग्नि अशुभनिमित्त होय अथवा अग्नि में कुछ विकार उत्पन्न हो तो भी देवता वास्तुपुरुष के जिस अंग में हो उस अंग को शल्ययुक्त जानै।।७८।।

शल्यपरत्वेन फलविचार:

धनहानिर्दारुमये पशुपीडारुग्भयानि चास्थिकृते ।
लोहमये शस्त्रभयं कपालकेशेषु मृत्युः स्यात् ।।७९।।
अंगारे स्तेनभयं भस्मनि च विनिर्दिशेत्सदाऽग्निभयम् ।
शल्यं हि मर्मसंस्थं सुवर्णजतादृतेऽत्यशुभम् ।।८०।।
मर्मण्यमर्मगो वा रुणद्ध्यर्थागमं तु ससमूहः । अपि
नागदन्तको मर्मसंस्थितो दोषकृद्भवति ।।८१।।

काष्ठ का शल्य हो तो धनहानि, हड्डियों का शल्य हो तो पशु पीड़ा और रोगभय होता है, लोह के शल्य से शस्त्रभय, कपाल और केशों के शल्य से मृत्यु।।७९।। कोयलों के शल्य से चोरभय, भस्म के शल्य से सदा अग्निभय होता है, सुवर्ण और चांदी विना और कोई शल्य जो वास्तु पुरुष के मर्म में स्थित

हो तो बहुत अशुभ होता है॥८०॥ जो धान आदि के तुष वास्तु पुरुष के मर्मस्थान में चाहे और किसी स्थान में होवे तो धन के आगमन को रोकते हैं, नागदन्त शुभ भी है, परंतु मर्मस्थान में हो तो दोष करनेवाला ही होता है॥८१॥

वास्तुपुरुषस्य मर्मस्थानकथनम्

रोगाद्वायं पितृतो हुताशनं शोषसूत्रमपि वितथात्।
मुख्याद्भृशं जयंताच्च भृंगमदितेश्च सुग्रीवम् ॥८२॥
तत्संपाता नव ये तान्यतिमर्माणि संप्रदिष्टानि।
एकपदस्याष्टांशस्तत्प्रोक्तं मर्मपरिमाणम् ॥८३॥
पदहस्तसंख्यया संमितानि वंशोऽङ्गुलानि विस्तीर्णः।
वंशव्यासोध्यर्धः शिराप्रमाणं प्रतिनिर्दिष्टम् ॥८४॥

वास्तुपुरुष में रोग नाम देवता से अनिल अर्थात् पिता से शिखिपर्यंत, वितथ से शोषपर्यंत, मुख्य से भृशपर्यंत, जयंत से भृंगपर्यंत और अदिति से सुग्रीवपर्यंत सब डाले॥८२॥ इन सभी के जो नौ "संपात" वे वास्तुपुरुष के अतिमर्म कहे हैं। एक पद का जो अष्टमांश वह मर्म का परिमाण है॥८३॥ पहिले जो छः छः सूत्र कहे उनका वंश भी कहते हैं और वास्तु विभाग के लिये जो पूर्वापर और दक्षिणोत्तर दश दश रेखा की हैं उनको शिरा कहते हैं। वास्तु में एक पद का विस्तार जितने हाथ हो उतनी अंगुली एक वंश का विस्तार होता है और

वंश के विस्तार से डचौढ़ा शिरा का विस्तार कहा है।।८४।।

सुखमिच्छन्ब्रह्माणं यत्नाद्रक्षेद्गही गृहान्तस्थम्।उच्छि-ष्टाद्युपघाताद् गृहपतिरुपतप्यते तस्मिन्।।८५।।दक्षिण भुजेन हीने वास्तुनरेऽर्थक्षयोऽङ्गनादोषाः । वामेऽर्थधा-न्यहानिः शिरसि गुणैर्हीयते सर्वैः ।।८३।। स्त्रीदोषाः सुतमरणं प्रेष्यत्वं चापि चरणवैकल्ये । अविकलपुरुषे वसतां मानार्थयुतानि सौख्यानि ।।८७।।

घर का स्वामी सुख चाहे तो वास्तु के मध्य में स्थित ब्रह्मा की यत्न से रक्षा करे, ब्रह्मा के ऊपर उच्छिष्ट आदि डालने से घर के स्वामी को क्लेश होता है।।८५।। वास्तुपुरुष की दहिनी भुजा हीन हो तो धन का नाश और स्त्रीदोष होते हैं, वामभुजा हीन हो तो धन और अन्न की हानि होती है। वास्तुपुरुष शिर से हीन हो तो धन आरोग्य आदि सब गुणों का नाश होता है।।८६।। वास्तुपुरुष चरणहीन हो तो स्त्रीदोष, पुत्रमरण और दासत्व होता है। वास्तुपुरुष के सब अंग पूरे हो उस वास्तु में रहनेवालों को मान और धन करके युक्त सुख होता है।।८७।।

गृहनगरग्रामेषु च सर्वत्रैवं प्रतिष्ठिता देवाः । तेषु च यथानुरूपं वर्णा विप्रादयो वास्याः ।।८८।। वासगृहाणि च विद्याद्विप्रादीनामुदग्दिगाद्यानि । विशतां यथास्व-

भवनं भवन्ति तान्येव दक्षिणतः ॥८९॥

घर नगर और ग्रामों में भी इसी प्रकार ये वास्तु देवता स्थित हो रहे हैं, उन नगर ग्राम आदि में ब्राह्मण आदि वर्णों को यथाक्रम बसावे॥८८॥ उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम इन चार दिशाओं में क्रम से चतु:शाल घर में, ग्राम में अथवा नगर में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र वसैं, ये घर ऐसे बनावे कि अपने घर के आंगन में प्रवेश करने के समय अपने निवास के घर दहिनी ओर पडे॥८९॥

द्वारपरत्वेन फलविचार:

नवगुणसूत्रविभक्तान्यष्टगुणेनाथवा चतु:षष्टेः ।
द्वाराणि यानि तेषामनलादीनां फलोपनयः ॥९०॥
अनलभयं स्त्रीजन्म प्रभूतधनता नरेन्द्रवाल्लभ्यम् ।
क्रोधपरताऽनृतत्वं क्रौर्यं चौर्य्यं च पूर्वेण ॥९१॥

इक्यासी पदके वास्तु में नौ गुणा सूत्र करके और चौसठ पद के वास्तु में आठगुणा सूत्र करके विभक्त किये हुए जो अनगल आदि बत्तीस द्वार उनका क्रम से फल कहते हैं॥९०॥ शिखी से लेकर अंतरिक्ष पर्यंत जो आठ देवता वास्तुपुरुष के पूर्वभाग में स्थित हैं उन पर द्वार हो तो क्रम से अग्निभय, कन्या जन्म, बहुतधन, राजा की प्रीति, क्रोधीपना, असत्य बोलना, क्रूरपना और चोरपना ये फल होते हैं॥९१॥

अल्पसुतत्वं प्रैष्यं नीचत्वं भक्ष्यपानसुतवृद्धिः । रौद्रं कृतघ्नमधनं सुतवीर्यघ्नं च याम्येन ॥९२॥ सुतपीड़ा रिपुवृद्धिर्न धनसुताप्तिः सुतार्थबलसंपत् । धनसंपन्नृपतिभयं धनक्षयो रोग इत्यपरे ॥९३॥ वधबन्धौ रिपुवृद्धिः सुतधनलाभः समस्तगुणसंपत् । पुत्रधनाप्तिवैरं सुतेन दोषाः स्त्रिया नैःस्व्यम् ॥९४॥

अनिल मे लेकर मृगपर्यंत दक्षिण के आठ देवताओं के पद में द्वार का क्रम से अल्पपुत्रता, दोषता, नीचता, भोजन, पान और पुत्रों की वृद्धि, रौद्र, कृतघ्न, धनहीन पुत्रबल का नाश ये फल हैं॥९२॥ पितृ मे लेकर पाप तक पश्चिम आठ देवताओं पर द्वार रखने का क्रम से पुत्रपीड़ा, शत्रुवृद्धि, धन और पुत्रों की नहीं प्राप्ति, पुत्र धन और बल की प्राप्ति, धनसंपत्ति, राजभय धनक्षय और रोग ये फल हैं॥९३॥ यक्ष्मरोग से लेकर दितिपर्यंत उत्तर के आठ देवताओं पर द्वार रखने से क्रम करके मृत्यु और बन्धन, शत्रुवृद्धि, पुत्र और लाभ, सब गुणों की सम्पत्ति, पुत्र और धन की प्राप्ति, पुत्र के साथ वैर, स्त्रीदोष और निर्धनता ये फल होते हैं॥९४॥

द्वारवेधे फलविचारः

मार्गतरुकोणकूपस्तम्भभ्रमाविद्धमशुभदं द्वारम् । उच्छ्रायाद्द्विगुणमितां त्यक्त्वा भूमिं न दोषाय ॥९५॥

रथ्याविद्धं द्वारं नाशाय कुमारदोषदं तरुणा। पङ्कद्वारे शोको व्ययोऽम्बुनि स्राविणि प्रोक्तः ॥९६॥ कूपेनापस्मारो भवति विनाशश्च देवताविद्धे। स्तम्भेन स्त्रीदोषाः कुलनाशो ब्रह्मणोऽभिमुखे ॥९७॥

मार्ग, वृक्ष, किसी दूसरे घर की खूंट, कुआं, खम्भा, भ्रम अर्थात् जल निकलने की मोरी इन करके विद्ध द्वार अशुभ होता है अर्थात् घर के द्वार के सम्मुख ये न होने चाहिये, परन्तु घर के द्वार की जितनी ऊंचाई हो उससे दूनी भूमि छोड़कर जो इनमें किसी का वेध हो तो कुछ दोष नहीं॥९५॥ घर के द्वार के मार्ग का वेध हो तो घर के स्वामी का नाश, वृक्ष का वेध हो तो बालकों का दोष, पंक अर्थात् घर के सम्मुख सदा कीचड बना रहे तो शोक होता है, मोरी का वेध हो तो धन का व्यय हो ॥९६॥ कूप का वेध हो तो अपस्मार अर्थात् मृगी रोग, देवता की मूर्तिका वेध हो तो घर के स्वामी का नाश, स्तम्भ का वेध हो तो स्त्रियों के दोष और ब्रह्मा के सम्मुख द्वार हो तो कुलका नाश होता है॥९७॥

उन्मादः स्वयमुद्धरितेऽथ पिहिते स्वयं कुलविनाशः। मानाधिके नृपभयं दस्युभयं व्यसनदं नीचम् ॥९८॥ द्वारं द्वारस्योपरि यत्तन्न शिवाय संकटं यच्च। आख्यातं क्षुद्भयदं कुब्जं कुलनाशनं भवति ॥९९॥ पीडाकरम-

तिपीडितमन्तर्विनतं भवेदभावाय । बाह्यविनते प्रवासो दिग्भ्रान्ते दस्युभिः पीडा ॥१००॥

जिस घर के द्वार का कपाट बिना खुले ही खुल जाय उसमें उन्माद रोग होता है, जिसका कपाट आप ही बन्द हो जाय उसमें कुलनाश हो जाता है, अपने नियत परिमाण से द्वार बड़ा हो तो राजा का भय और छोटा हो तो चोरभय होता है और दुःख देता है॥९८॥ ठीक द्वार पर दूसरे घर का द्वार आवे वह शुभ नहीं होता और सिकुड़ा द्वार भी शुभ नहीं। बहुत चौड़ा द्वार क्षुधा का भय करता है और कुबडा द्वार कुल का नाश करनेवाला होता है॥९९॥ ऊपर के काष्ठ से बहुत दबा हुआ द्वार घर के स्वामी को पीड़ा करता है, भीतर को झुका हुआ गृह स्वामी का मरण करता है, बाहर को झुका हो तो गृहस्वामी विदेश में रहे और किसी दिशा की ओर देखता हो तो चोरों करके पीड़ा होती है॥१००॥

द्वारस्वरूपकथनम्

मूलद्वारं नान्यैर्द्वारैरभिसंदधीत रूपवृद्ध्या । घटफलपत्रप्रमथादिभिश्च तन्मंगलैश्चिनुयात्॥१०१॥ऐशान्यादिषु कोणेषु संस्थिता बाह्यतो गृहस्यैताः।चरकी विदारिनामाऽथ पूतना राक्षसी चेति ॥१०२॥ पुरभवनग्रामाणां ये कोणास्तेषु निवसतां दोषः । श्वपचादयोऽ-

न्त्यजातास्त्तेष्वेव विवृद्धिमायांति ॥१०३॥

घर के मुख्य द्वार का स्वरूप और सामान्य स्वरूप समान ही न करे अर्थात् और द्वारों से मुख्य द्वार का स्वरूप उत्तम होना चाहिये। मुख्य द्वार को कलश फल पत्र शिवजी के गण आदि मंगलदायक रूपों से शोभित करे अर्थात् इनके चित्र द्वार पर खुदवावे॥१०१॥ घर के बाहर ईशान आदि चारों कोणों में क्रम से चर की, विदारी, पूतना और राक्षसी ये चार देवता स्थित हैं॥१०२॥ घर ग्राम और नगर के जो चारों कोण है उनमें बसनेवालों को अनेक प्रकार के क्लेश होते हैं और उन कोणों में जो श्वपच आदि नीच जाति बसैं उनकी वृद्धि होती है॥१०३॥

गृहसमीपे वृक्षपरत्वेन फलकथनम्

याम्यादिष्वशुभफला जातास्तरवः प्रदक्षिणेनैते ।
उदगादिषु प्रशस्ताः प्लक्षवटोदुंबराश्वत्थाः ॥१०४॥
आसन्नाः कंटकिनो रिपुभयदाः क्षीरिणोऽर्थनाशाय ।
फलिनः प्रजाक्षयकरा दारूण्यपि वर्जयेदेषाम् ॥१०५॥
छिंद्याद्यदि न तरूस्तांस्तदंतरे पूजितान्वपदेन्यान्।पुन्ना-गाऽशोकाऽरिष्टबकुलपनसाञ्छमीशालौ ॥१०६॥ श-स्तौषधिद्रुमलता मधुरा सुगन्धा स्निग्धा समानसुषिरा च मही नराणाम् । अप्यध्वनि श्रमविनोदमुपागतानां

धत्ते श्रियं किमुत शाश्वतमंदिरेषु ॥१०७॥

प्लक्ष अर्थात् पिलखन, बड़, गूलर, पीपल ये चार वृक्ष क्रम से घर के दक्षिण, पश्चिम, उत्तर और पूर्व में होंय तो अशुभ होते हैं और उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम में क्रम से वृक्ष उत्पन्न हो तो शुभ हैं।।१०४।। घर के समीप खदिर आदि कांटोवाले वृक्ष हो तो शत्रुभय करते है, आक आदि दूधवाले वृक्ष धन का नाश करते हैं, आम्र आदि फलनेवाला वृक्ष संतान का क्षय करते हैं, इन वृक्षों का काष्ठ भी घर में न लगावे।।१०५।। जो घर के समीप ये वृक्ष हों और इनको काटे नही तो इनके साथ और शुभ वृक्ष लगा देवे, नागकेशर, अशोक, निम्ब, बकुल (मौलसिरी), पनस (कटहर), शमी (जांटी), साल ये वृक्ष शुभ हैं।।१०६।। उत्तम औषधि वृक्ष और लताओं करके युक्त मीठी सुगंधवाली चिकनी समान और छिद्रों से रहित ऐसी भूमि मार्ग में चलनेवाले पुरुष जो श्रम दूर करने के लिये क्षणमात्र उसमें बैठ जावें उनको भी लक्ष्मी देती है, फिर जिनके घर ही ऐसी भूमि में बने हैं और वे पुरुष सदा उनमें रहते हैं उनको लक्ष्मी प्राप्त होना कौन बड़ी बात है।।१०७।।

राजगृहसीपे मन्त्रिदेवतादिगृहेषु फलकथनम्

सचिवालयेऽर्थनाशो धूर्तगृहे सुतवधः समीपस्थे। उद्वेगो देवकुले चतुष्पथे भवति चाकीर्तिः ॥१०८॥ चैत्ये भयं

ग्रहकृतं वल्मीकश्वभ्रसंकुले विपदः। गर्तायां तु पिपासा कूर्माकारे धनविनाशः ॥१०९॥ उदगादिप्लवमिष्टं विप्रादीनां प्रदक्षिणेनैव।विप्रः सर्वत्र वसेदनुवर्णमथेष्ट-मन्येषाम् ॥११०॥

राजा के घर के समीप मंत्री का घर हो तो धन का नाश होता है, धूर्त्त अर्थात् दूसरों को ठगनेवाले का घर हो तो पुत्रमरण, देवता का मंदिर समीप हो तो उद्वेग अर्थात् चित्त को खेद रहे, चतुष्पथ (चौरस्ता) समीप हो तो अकीर्ति हो ॥१०८॥ चैत्य (भूतों से आक्रांतवृक्ष) घर के समीप हो तो घर के स्वामी को ग्रहों का भय रहे। सर्प की बांबी और गर्तों करके युक्त भूमि घर के समीप हो तो विपत्ति हो । घर के समीप गड्ढा हो तो प्यास का रोग हो और कछुआ के समान आकार की भूमि घर के समीप हो तो घर के स्वामी के धन का नाश होता है॥१०९॥ उदक्प्लव अर्थात् जिस भूमि का झुकाव उत्तर की ओर हो वह भूमि ब्राह्मणों के लिये शुभ है, इसी प्रकार पूर्वप्लव, दक्षिणप्लव और पश्चिमप्लव भूमि क्रम से क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिये शुभ होती है। ब्राह्मण सब प्रकार की भूमि में वसे उसका चाहे जिस दिशा में प्लव हो, और वर्णों के लिये अनुवर्ण भूमि शुभ है अर्थात् पूर्वप्लव, दक्षिणप्लव, और पश्चिमप्लव क्षत्रियों को, दक्षिणप्लव और

पश्चिमप्लव वैश्यों को और केवल पश्चिमप्लव शूद्रों को शुभ है॥११०॥

गृहाय शुभाशुभभूमिकथनम्

गृहमध्ये हस्तमितं खात्वा परिपूरितं पुनः श्वभ्रम् ।यद्यूनमनिष्टं तत्समे समं धन्यमधिकं यत् ॥१११॥श्वभ्रमथवाऽम्बुपूर्णं पदशतमित्वाऽऽगतस्य यदि नोनम् । तद्धन्यं यच्च भवेत्पलानि पांस्वाढकं चतुःषष्टिः ॥११२॥

घर के बीच एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गह ा खोल गढ़ा खोदे, पीछे उसको उसकी मिट्टी से भरे जो गढ़ा भरने में मिट्टी न्यून हो जाय तो वह घर अशुभ होता है। ठीक ठीक गढ़ा भर जाय तो सम अर्थात् न शुभ और न अशुभ होता है और जो गढ़ा भर जाय और मिट्टी बच भी रहै वह घर सब भांति शुभ होता है॥१११॥ अथवा पूर्वोक्त ि में गढ़ा खोदकर उसमें जल भरकर सौ पद (कदम) पर्यंत जाकर लौट आव, इतने काल में जो गढ़े में जल कुछ भी न घटे वह भूमि शुभ होती है और जहां की धूली से आढ़क को भरकर फिर तोलें और वह धूली चौसठ पल हो तो वह भूमि शुभ है। अन्न मापने का एक काष्ठ का पात्र जिसमें अनुमान चार सेर के लगभग अन्न आता है उसको आढ़क कहते हैं। चालीस मासे का पल होता है॥११२॥

ब्राह्मणादिवर्णानां शुभाशुभभूमिकथनम्

आमे वा मृत्पात्रे श्वभ्रस्थे दीपवर्तिरभ्यधिकम् । ज्व-
लति दिशि यस्य शस्ता सा भूमिस्तस्य वर्णस्य।।११३।।
श्वभ्रे स्थितं न कुसुमं यस्मिन् प्रम्लायतेऽनुवर्णसमम् ।
तत्तस्य भवति शुभदं यस्य च यस्मिन् मनो रमते।११४।
सितरक्तपीतकृष्णा विप्रादीनां प्रशस्यते भूमिः।गन्धश्च
भवति यस्या घृतरुधिरान्नाद्यमद्यसमः ।।११५।।
कुशयुक्ता शरबहुला दूर्वाकाशावृता क्रमेण मही ।
अनुवर्णं वृद्धिकरी मधुरकषायाम्लकटुका च ।।११६।।

मिट्टी के कच्चे पात्र में चार बत्ती डाल उन बत्तियों में ब्राह्मण आदि चार वर्णों की कल्पना कर दीपक जलाय गढ़े में रखे, जिस वर्ण की दिशा में बत्ती बहुत काल तक जलती रहे वह भूमि उस वर्ण को शुभ है।।११३।। ब्राह्मण आदि वर्ण के रंग के समान अर्थात् श्वेत रक्त पीत और कृष्ण रंग के चार फूल लेकर गढ़े में सायंकाल को रखे और दूसरे दिन देखे, जिस वर्ण का फूल न कुम्हलाया हो वह भूमि उस वर्ण के लिये शुभ है अथवा जिस भूमि में अपना मन लगे वह भूमि शुभ है, उसमें और कुछ विचार न करे।।११४।। ब्राह्मण आदि चारों वर्णों के लिये क्रम से श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण की भूमि शुभ है जिस भूमि में घृत, रुधिर, अन्न आदि और मद्य के समान गंध

हो वह ब्राह्मण आदि वर्णों के लिये क्रम से शुभ है।।११५।। जिस भूमि में कुशा, शर, दूब और कास बहुत हो वह ब्राह्मण आदि वर्णों के लिये क्रम से शुभ है और जिस भूमि की मृत्तिका मीठी, कसैली, खट्टी और चरपरी हो वह भूमि क्रम करके ब्राह्मण आदि चार वर्णों के लिये शुभ होती है।।११६।।

गृहकरणात्पूर्वकरणीयकर्माणि

कृष्टां प्ररूढबीजां गोऽध्युषितां ब्राह्मणैः प्रशस्तां च । गत्वा महागृहपतिः काले सांवत्सरोद्दिष्टे ।।११७।। भक्ष्यैर्नानाकारैर्दध्यक्षतसुरभिकुसुमधूपैश्च । दैवतपूजां कृत्वा स्थपतीनभ्यर्च्य विप्रांश्च ।।११८।। विप्रः स्पृष्ट्वा शीर्षं वक्षश्च क्षत्रियो विशश्चोरू । शूद्रः पादौ स्पृष्ट्वा कुर्याद्रेखां गृहारम्भे ।।११९।।

जिस भूमि में घर बनाना हो पहिले वह भूमि हल से जोती जाय फिर उसमें बीज बोये जाय वे जब पकचुके उसके अनन्तर एक रात्रि उस भूमि में गौ बैठे और ब्राह्मण उस भूमि की प्रशंसा करे ऐसी भूमि में घर बनाने की इच्छावाला पुरुष ज्योतिषी के बताये मुहूर्त पर जाकर।।११७।। अनेक प्रकार के लड्डू अपूप आदि भक्ष्य दही अक्षत सुगंधयुक्त पुष्प और धूप करके क्षेत्रपाल आदि देवताओं का पूजन कर स्थपति अर्थात् मिस्तरी और ब्राह्मगों का भी पूजन कर गृहारंभ की रेखा

करे।।११८।। रेखा करने के समय ब्राह्मण अपने शिर को, क्षत्रिय छाती, वैश्य उरुको और शूद्र पैरों को स्पर्श करके रेखा करे।।११९।।

अंगुष्ठकेन कुर्यान्मध्यांगुल्याऽथवा प्रदेशिन्या। कनकमणिरजतमुक्तादधिफलकुसुमाक्षतैश्चशुभम् ।।१२०।। शस्त्रेण शस्त्रमृत्युर्बन्धो लोहेन भस्मनाऽग्निभयम्। तस्करभयं तृणेन च काष्ठोल्लिखिता च राजभयम् ।।१२१।। वक्रा पादालिखिता शस्त्रभयक्लेशदा विरूपा च।चर्माङ्गारास्थिकृता दन्तेन च कर्तुरशिवाय।।१२२। वैरमपसव्यलिखिता प्रदक्षिणे सम्पदो विनिर्देश्याः। वाचः परुषा निष्ठीवितं क्षुतं चाशुभं कथितम्।।१२३।।

गृहारंभ में जो गृहपति अंगुष्ठ मध्यमा प्रदेशिनी अंगुष्ठ के समीप की अंगुली सुवर्ण मणि चांदी मोती दही फल पुष्प अक्षत इनमें से किसी करके रेखा करे तो शुभ होता है।।१२०।। शस्त्र करके रेखा करे तो शस्त्र करके ही गृहस्वामी की मृत्यु हो । लोह करके करे तो बंधन, भस्म करके करे तो अग्निभय, तृण करके करे तो चोर भय और काष्ठ करके गृहारंभ में रेखा करे तो राजभय होता है।।१२१।। टेढ़ी पैर से खैंची हुई अथवा बुरे रूप की रेखा हो तो शत्रुभय और क्लेश देती है, चर्म कोयला, हाड और दांत करके करी हुई रेखा गृहस्वामी को

अशुभ करती है॥१२२॥ अपसव्य अर्थात् जो रेखा दहिनी ओर से बांई ओर को खैंची जाय वह वैर करती है और प्रदक्षिण अर्थात् बांई ओर से दहिनी ओर रेखा खैंची जाय तो संपत्ति होती हैं गृहारंभ के समय कोई कठोर वचन बोले, थूके अथवा छींके तो अशुभ कहा है॥१२३॥

गृहमध्ये शल्यकथनम्

अर्धनिचितं कृतं वा प्रविशन् स्थपतिर्गृहनिमित्तानि। अवलोकयेद्गृहपतिः क्व संस्थितः स्पृशति किंचाङ्गम् ॥रविदीप्तो यदि शकुनिस्तस्मिन्काले विरौति परुषर-वः।संस्पृष्टांगसमानं तस्मिन्देशेऽस्थि निर्देश्यम्।१२५॥

अर्ध बने अथवा संपूर्ण बने घर में प्रवेश करता हुआ स्थपति (कारीगर) शुभ अशुभ चिह्न देखे। यह देखे कि, घर का स्वामी वास्तुपुरुष के किस अंग पर स्थित है और अपने किस अंग को स्पर्श कर रहा है॥१२४॥ उस समय सूर्य के वश जो दीप्त दिशा उसमें स्थित पक्षी रूखा शब्द बोलता हो तो जिस स्थान पर गृहपति स्थित है वहां नीचे हड्डी गड़ी है। उस अंग की है जो अंग गृहपति ने उस समय स्पर्श का रखा है यह जाने, उदय के समय सूर्य पूर्वदिशा में रहता है, फिर दिन रात के आठ प्रहरों में क्रम से एक एक प्रहर आठों दिशाओं में सूर्य गमन करता है, जिस दिशाओं को सूर्य छोड़कर आया हो वह दिशा अंगारिणी, जिसमें स्थित हो वह दीप्ता, जिसमें जाने

वाला हो वह धूमिता दिशा होती है। इन तीनों को छोड़ शेष पांच दिशा शांता होती हैं।।१२५।।

शकुनसमयेऽथवाऽन्ये हस्त्यश्वश्वादयोऽनुवाशंते। तत्प्रभवमस्थि तस्मिंस्तदंगसंभूतमेवेति ।।१२६।। सूत्रे प्रसर्पमाणे गर्द्दभरावोऽस्तिशल्यमाचष्टे। श्वशृगाललंघिते वा सूत्रे शल्यं विनिर्द्दैश्यम् ।।१२७।। दिशि शांतायां शकुनो मधुरविरावी यदा तदा वाच्यः। अर्थस्तस्मिन्स्थाने गृहेश्वराधिष्ठितेऽङ्गे वा ।।१२८।।

अथवा शकुन देखने के समय दीप्त दिशा की ओर मुख कर के हाथी, घोड़ा, कुत्ता आदि जीव शब्द करे तो जहां गृहपति स्थित है उस स्थान में उन जीवों के उसी अंग की हड्डी जाने, जो अंग गृहस्वामी ने स्पर्श कर रखा है।।१२६।। सूत्र पसारने के समय गर्द्दभ बोले तो भी अस्थिशल्य होता है अर्थात् गृहस्वामी जहां बैठा हो उसके नीचे हड्डी गड़ी होती है, जो सूत्र को श्वान अथवा शृगाल (गीदड़) लंघन कर जाय तो भी उस स्थान में शल्य जाने।।१२७।। जो उस समय शांत दिशा की ओर मुख करके पक्षी मधुर शब्द बोले तो जहां वह पक्षी बैठा है उस स्थान में अथवा घर का स्वामी वास्तुपुरुष के जिस अंग पर बैठा है उसमें धन कहना चाहिये अर्थात् वहां भूमि में द्रव्य जाने।।१२८।।

सूत्रच्छेदादौ फलकथनम्

सूत्रच्छेदे मृत्युः कीले चावाङ्मुखे महान्रोगः। गृहनाथस्थपतीनां स्मृतिलोपे मृत्युरादेश्यः ॥१२९॥ स्कन्धाच्च्युते शिरोरुक्कुलोपसर्गोऽपवर्जिते कुम्भे। भग्नेऽपि च कर्मिवधश्च्युते कराद् गृहपतेर्मृत्युः ॥१३०॥

पमाग्ने के ममय मूत्र टूट जाय तो गृहम्वामी की मृत्यु होती है, गाड़ने के ममय कील का मुख नीचे को हो जाय तो वड़ा रोग हो गृहम्वामी और म्थपति (मिम्तरी) की म्मृति अर्थात् म्मरणशक्ति जाती रहे तो उनकी मृत्यु कहना चाहिये॥१२९॥ जल का कलश लाने के ममय कंधे मे गिर जाय तो गृह म्वामी को शिर का रोग हो , जो वह कलश गिरकर औंधा हो जाय तो गृह म्वामी के कुल को उपद्रव हो फूट जाय तो कर्म कर (मजदूर) की मृत्यु हो और हाथ मे कलश छूट पड़े तो गृहस्वामी की मृत्यु होती है॥१३०॥

शिलान्याम-स्तंभम्थापनविधिः

दक्षिणपूर्वे कोणे कृत्वा पूजां शिलां न्यसेत्प्रथमाम्।शेषाः प्रदक्षिणेन स्तम्भाश्चैवं समुत्थाप्याः ॥१३१॥ छत्रस्रगम्बरयुतः कृतधूपविलेपनः समुत्थाप्यः। स्तम्भस्तथैव कार्यो द्वारोच्छ्रायः प्रयत्नेन ॥१३२॥ विहगादिभिरवलीनैराकंपितपतितदुःस्थितैश्च तथा। शक्रध्वजसदृश-

फलं तदेव तस्मिन्विनिर्दिष्टम् ।।१३३।।

अग्निकोण में पूजा करके पहिली शिला स्थापन करे पीछे और शिला भी प्रदक्षिण क्रम से स्थापन करे इसी भांति स्तंभ भी खड़े करने चाहिये।।१३१।। स्तम्भ को छत्र पुष्पमाला और वस्त्र करके भूषित कर गंध, धूप आदि से उसका पूजन कर खड़ा करे। इसी प्रकार द्वार (चौकट) को भी यत्नपूर्वक खड़ा करना चाहिये।।१३२।। स्तम्भ अथवा द्वार के ऊपर पक्षी आदि बैठे स्तम्भ अथवा द्वार खड़े करने के समय में गिर जाय अथवा ठीक खड़े न हो तो उनका फल इन्द्रध्वज के फल के समान जाने अर्थात् इन्द्रध्वजाध्याय में जो शुभ अशुभ फल कहा है वही यहां भी जाने।।१३३।।

पूर्वादिदिक्षु गृहस्य उच्चनीचत्वे फलकथनम्

प्रागुत्तरोन्नते धनसुतक्षयः सुतवधश्च दुर्गन्धे । वक्रे बन्धुविनाशो न सन्ति गर्भाश्च दिङ्मूढे ।।१३४।।इच्छे-च्छदि गृहवृद्धिं ततः समन्ताद्विवर्धयेत्तुल्याम् । एको द्वेषं दोषः प्रागथवाप्युत्तरे कुर्यात् ।।१३५।। प्राग्भवति मित्रवैरं मृत्युभयं दक्षिणेन यदि वृद्धिः । अर्थविनाशः पश्चादुदग्विवृद्धौ मनस्तापः ।।१३६।।

जो वास्तु पूर्व अथवा उत्तर दिशा में ऊंचा हो तो धन और पुत्रों का क्षय, दुर्गंधयुत वास्तु हो तो पुत्रमरण, टेढ़ा

वस्तु हो तो बंधुनाश और दिङ्मूढ़ अर्थात् जिसमें दिग्भाग न जाना जाय ऐसा वास्तु हो तो उसमें रहनेवाली स्त्रियों को गर्भ न हो ॥१३४॥ जो घर की वृद्धि चाहे तो चारों ओर वास्तु को तुल्य बढ़ाये न्यून अधिक न बढ़ावे। जो वास्तु के एक ओर दोष हो अर्थात् बढ़ाना हो तो उसको पूर्व अथवा उत्तर में बढ़ाये॥१३५॥ जो वास्तु पूर्व की ओर बढ़ा हो तो मित्रों के साथ वैर हो , दक्षिण की ओर बढ़ा हो तो मृत्यु का भय, पश्चिम को बढ़े तो धन का नाश और उत्तर की ओर वास्तु बढ़ा हो तो चित्तसंताप होता है। पूर्व और उत्तर में वास्तु बढ़ने का दोष थोड़ा है, इसलिये पहली आर्या में लिखा है कि, बढ़ाना हो तो पूर्व अथवा उत्तर को बढ़ाये॥१३६॥

ऐशान्यादिक्रमेण देवतादिगृहकरणकथनम्

ऐशान्यां देवगृहं महानसं चापि कार्यमाग्नेय्याम् । नैर्ऋत्यां भाण्डोपस्करोऽर्थधान्यानि मारुत्याम्॥१३७॥प्राच्यादिस्थे सलिलेसुतहानिः शिखिभयमरिभयं चास्त्रीकलहः स्त्रीदौष्ट्यं नैःस्व्यं वित्तात्मजविवृद्धिः॥१३८॥

घर के ईशान कोण में देवतागृह, अग्निकोण में रसोई का घर, नैर्ऋत्यकोण में गृहस्थी की सब सामग्री रखने का घर और वायुकोण में धन और अन्नस्थापन का घर बनाये॥१३७। घर से पूर्व आदि दिशाओं में जल स्थित हो तो क्रम से

पुत्रमरण, अग्निभय, शत्रुभय, स्त्रियों में कलह, स्त्रियों में दु:शीलता, निर्धनता, धनवृद्धि और पुत्रवृद्धि ये फल होते हैं॥१३८॥

गृहयोग्यवृक्षकथनम्

खगनिलयभग्नसंशुष्कदग्धदेवालयश्मशानस्थान् ।क्षीर-तरुधवविभीतकनिम्बारणिवर्जितांश्छिद्यात् ॥१३९॥

जिनमें पक्षियों के घोंसले हों, टूटे हुये, सूखे, जले हुये, देवता के मंदिर में अथवा श्मशान स्थित ऐसे वृक्षों को और जिनमें दूध निकलता हो उनको और धव, बहेड़ा, नींब और अरल इन सबको छोड़ और वृक्षों को घर के लिये काटे अर्थात् इन वृक्षों का काष्ठ घर में न लगावे॥१३९॥

वृक्षच्छेदनविधि:

रात्रौ कृतबलिपूजः प्रदक्षिणं छेदयेद्दिवा वृक्षम् । धन्य-मुदक्प्राक्पतनं न ग्राह्योऽतोऽन्यथा पतितः ॥ छेदो यद्यविकारी ततः शुभं दारु तद्गृहौपयिकम्॥१४०॥

रात्रि के समय वृक्ष का पूजन कर बलि देकर दिन में प्रदक्षिण क्रम से ईशानकोण से लेकर उस वृक्ष को काटे। जो वृक्ष कटकर उत्तर अथवा पूर्वदिशा में गिरे वह शुभ है, जो और दिशा में वृक्ष कटकर गिरें उसको ग्रहण न करे अर्थात् उसका काष्ठ घर में न लगावे,काटने के समय जिस वृक्ष का

छेद अर्थात् कटने का स्थान विकार रहित हो तो उस वृक्ष का काष्ठ घर के लिये शुभ होता है।।१४०।।

पीते तु मण्डले निर्दिशेत्तरोर्मध्यगां गोधाम् ।।१४१।। मंजिष्ठाभे भेको नीले सर्पस्तथाऽरुणे सरठः । मुद्गाभेऽश्मा कपिले तु मूषकोऽम्भश्च खड्गाभे ।।१४२।।

वृक्ष के छेद में पीले रंग का मंडल देख पड़े तो उस वृक्ष के मध्य में गोधा (गोह) रहती है यह कहना चाहिये।।१४१।। मँजीठ के समान लाल रंग का मंडल देख पड़ै तो मेंड़क, नीलरंग का मंडल हो तो सर्प, रक्तवर्ण का मंडल हो तो सरठ (गिरगिट), मूँग के रंग का अर्थात् हरा मंडल देख पड़े तो पत्थर, कपिल वर्ण का मंडल हो तो मूषक और वृक्ष के छेद में खड्ग के रंग का मंडल देख पड़े तो वृक्ष के नीचे जल है यह कह दे ।।१४२।।

गृहप्रवेशविधिः

भूरिपुष्पनिकरं सतोरणं तोयपूर्णकलशोपशोभितम् । धूपगन्धबलिपूजिताऽमरं ब्राह्मणध्वनियुतं विशेद् गृहम् ।।१४३।।

बहुत पुष्पों के समूह करके भूषित तोरण करके युक्त पूर्णकलशों करके शोभित और जिसमें धूप गंध बलि आदि करके देवताओं का पूजन हुआ हो और ब्राह्मण जिसमें

वेदध्वनि कर रहे हों ऐसा जो घर है उसमें प्रवेश करे।।१४३।।

धान्यगोगुरुहुताशसुराणां न स्वपेदुपरि नाप्यनुवंशम् । नोत्तरापरशिरा नच नग्नो नैव चार्द्रचरणः श्रियमिच्छन् ।।१४४।।

लक्ष्मी की इच्छावाला पुरुष अन्न, गौ, गुरु, अग्नि और देवता इनके ऊपर न सोये और "रोगाद्वायुं पितृतो हुताशनम्" इत्यादि आर्याछंद में जो पहिले वंश कह आये हैं उनकी लंबाई के अनुसार शय्या बिछाकर भी शयन न करे, उत्तर अथवा पश्चिम को शिर करके न सोये धोंती खोल कर अर्थात् नंगा होकर न सोये और जल से भीगे हुये पैर रखकर न सोये।।१४४।।

गृहप्रवेशकालः

सौम्यायने ज्येष्ठतपोन्त्यमाधवे यात्रानिवृत्तौ नृपतेर्नवे गृहे । स्याद्वेशनं द्वास्थमृदुध्रुवोडुभिर्जन्मर्क्ष लग्नोपचयोदये स्थिरे ।।१४५।।

उत्तरायण सूर्य हो, ज्येष्ठ, माघ, फाल्गुन, वैशाख ये महीने हों, द्वाःस्थ अर्थात् जिस घर में प्रवेश करना वांछित हो उसका जिस दिशा में मुख हो उस दिशा के नक्षत्र पूर्व आदि चार दिशाओं में कहे सात सात कृत्तिका आदि मृगशिर, रेवती,

चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी ये नक्षत्र हों जन्मराशि और जन्मलग्न से तीसरा छठा दशवां ग्यारहवां लग्न हो और वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ ये लग्न हों तब नये घर में यात्रा की निवृत्ति होने में राजा का प्रवेश करना शुभ है।।१४५।।

मृदुध्रुवक्षिप्रचरेषु मूलभे वास्त्वर्चनं भूतबलिं च कारयेत्। त्रिकोणकेन्द्रायधनत्रिगैः शुभैर्लग्ने त्रिषष्ठायगतैश्च पापैः ।।१४६।।

मृगशिर, रेवती, चित्रा, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, मूल इन नक्षत्रों में और पांचवां नववां लग्न चौथा सातवां दशवां ग्यारहवां दूसरा इन स्थानों में शुभ ग्रह हों और तीसरा छठा, ग्यारहवां इन स्थानों में पापग्रह हों ऐसे लग्न में वास्तु की पूजा और भूतबलि को करवाये।।१४६।।

शुद्धाम्बुरंध्रे विजनुर्भमृत्यौ व्यर्कारिरिक्ताचरदर्शचैत्रे। अग्रेऽम्बुपूर्णं कलशं द्विजांश्च कृत्वा विशेद्वेश्म भकूटशुद्धम् ।।१४७।।

चौथा और आठवां स्थान शुद्ध हो, अपने जन्मनक्षत्र से अथवा अपनी जन्मराशि से अष्टमराशि नहीं हो रविवार मंगलवार, चतुर्थी नवमी चतुर्दशी दग्धातिथि, मेष कर्क तुला

मकर ये लग्न, अमावस चैत्र महीना ये सब नहीं हो। गृहप्रवेश के समय जल से पूर्ण कलश अपने सन्मुख कर ब्राह्मणों को आगे कर गृह में प्रवेश करे। वर्ण, वश्य, तारा हन आदि से नक्षत्र शुद्ध हो।।१४७।।

कृत्वा शुक्रं पृष्ठतो वामतोऽर्कं विप्रान्पूज्यानग्रतः पूर्णकुंभम् । रम्यं हर्म्यं तोरणस्रग्वितानैः स्त्रीभिः स्रग्वी गीतवाद्यैर्विशेत्तत् ।।१४८।।

शुक्र को पीठ पीछे कर, सूर्य को बायें कर, ब्राह्मण और पूजनीयों को तथा जल से पूर्ण कलश को आगे कर सुंदर माला पहन तोरण और बन्दवारों से सजाये हुये घर में स्त्री और गाना बजाना सहित प्रवेश करे।।१४८।।

वामो रविर्मृत्युसुतार्थलाभतोऽर्के पंचमे प्राग्वदनादि-मन्दिरे । पूर्णातिथौ प्राग्वदने गृहे शुभो नन्दादिके याम्यजलोत्तरानने ।।१४९।।

घर का पूर्व को द्वार हो तो प्रवेश का लग्न से आठवां नववां दशवां ग्यारहवां और बारहवां इन स्थानों में सूर्य हो तब वामार्क जानना। दक्षिण को द्वार हो तो प्रवेश का लग्न से पांचवां छठा सातवां आठवां नववां इन स्थानों में सूर्य हो तब वामार्क जानना। पश्चिम को द्वार हो तो प्रवेश का लग्न से दूसरा तीसरा चौथा पांचवां और छठा इन स्थानों में सूर्य हो

तब वामार्क जानना। उत्तर को द्वार हो तो ग्यारहवां बारहवां लग्न दूसरा तीसरा इन स्थानों में सूर्य हो तो वामार्क जानना। पूर्व को मुखवाले घर में पंचमी दशमी पौर्णमासी इन दिनों में प्रवेशशुभ है, पश्चिम के मुखवाले घर में द्वितीया सप्तमी द्वादशी इन तिथियों में प्रवेश करना शुभ है, उत्तर के मुखवाले घर में तृतीया अष्टमी और त्रयोदशी तिथियों में प्रवेश शुभ है।।१४९।।

गृहप्रवेशे कलशचक्रम् ।

वक्त्रे भू रविभात्प्रवेशसमये कुंभेऽग्निदाहः कृताः, प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे । श्रीर्वेदाः कलिरुत्तरे युगमितागर्भे विनाशो मुदे, रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कंठे भवेत्सर्वदा ।।१५०।।

इति विश्वकर्मविद्याप्रकाशः समाप्तः ।

घर के प्रवेशसमय में जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे गिने, कलशाकृति वास्तु के मुख में १ नक्षत्र है, उसमें प्रवेश हो तो घर में अग्नि लगे, पीछे ४ नक्षत्र पूर्व में हैं, उनमें प्रवेश हो तो मनुष्य के वाससे रहित घर रहे, पीछे ४ नक्षत्र दक्षिण में हैं, उनमें प्रवेश हो तो द्रव्य की प्राप्ति हो पीछे ४ नक्षत्र पश्चिम में हैं, उनमें प्रवेश हो तो लक्ष्मी मिलती है, पीछे ४ नक्षत्र उत्तर में हैं, उनमें प्रवेश हो तो कलह अर्थात् लड़ाई रहे, पीछे

४ नक्षत्र गर्भ में हैं, उनमें प्रवेश करे तो गर्भ का नाश हो, पीछे ३ नक्षत्र गुदा में हैं, उनमें प्रवेश हो तो बहुत काल पर्य्यंत स्थिति रहे, पीछे तीन नक्षत्र कंठ में हैं, उनमें प्रवेश हो तो घर के स्वामी की स्थिरता रहे॥१५०॥

इति विश्वकर्मविद्याप्रकाश की हिन्दीटीका समाप्त हुई।

हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८



हमारे प्रकाशनों की अधिक जानकारी व खरीद के लिये हमारे निजी स्थान :

खेमराज श्रीकृष्णदास
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७ वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर,
मुंबई - ४०० ००४.
दूरभाष/फैक्स-०२२-२३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे - ४११ ०१३.
दूरभाष-०२०-२६८७१०२५,
फैक्स -०२०-२६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो
श्रीलक्ष्मीवेंकटेश्वर प्रेस बिल्डींग,
जूना छापाखाना गली, अहिल्याबाई चौक,
कल्याण, जि. ठाणे, महाराष्ट्र - ४२१ ३०१
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२-२४२००७८

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS

